

चैतन्य महाप्रभु का जन्म 1486 ई. में होली के दिन बंगाल के नवद्वीप नगर में हुआ था। उनके पिता का नाम था पण्डित जगन्नाथ मिश्र और माता का नाम शची देवी। माता ने उनका नाम निमाई रख दिया।

महाप्रभु के नामकरण के अवसर पर “निमाई” के स्वभाव की जांच की गई। उनके सामने कपड़े, हथियार, पुस्तकें आदि रख दी गई। नन्हें निमाई ने सरक-सरक कर हाथ आगे बढ़ाया और श्रीमद्भागवत् पर रख दिया। इस तरह मानों उन्होंने बचपन में ही अपने भगवद् प्रेम की घोषणा कर दी।

निमाई बचपन से ही नटखट और चंचल थे। उनकी बाल-लीलाओं को देखकर श्री कृष्ण के बचपने की याद ताजा हो जाती है। कहते हैं कि एक दिन एक कालानाग उनके घर में निकला। निमाई को देखकर नाग कुण्डली मार बैठ गया। निमाई बालक तो थे ही, बिना डरे ही वह नाग के फन को अपनी नन्हों-2 उंगलियों से सहलाने लगे। नाग झूम रहा था और बालक निमाई हंस रहे थे और बड़े भाई जो उसी समय वहां आए थे, डर के मारे कांपने लगे। उन्हें कुछ सूझता नहीं था कि क्या करें ?

एक दिन एक ब्राह्मण निमाई के यहां आया। उनके पिता ने ब्राह्मण की बड़ी आव-भगत की। ब्राह्मण ने चौका लीप-पोतकर भोजन तैयार किया। खाने से पहले उसने आँख बन्द कर के विष्णु भगवान् का ध्यान कर भोग लगाना चाहा। ठीक उसी समय नन्हें निमाई कहीं से आ पहुंचे। उन्होंने आकर भोजन में हाथ डाल और खाना शुरू कर दिया। यह देखकर ब्राह्मण कुछ झुंझला उठा-अरे, यह किस का बालक है।

उन दिनों चौके, भोजन आदि का पवित्रता का बहुत ध्यान रखा जाता था। ब्राह्मण अपने हाथ से भोजन बनाया करते थे। चौके में कोई और घुसा और भोजन अपवित्र हुआ। उस ब्राह्मण का चौका और भोजन निमाई के कारण अपवित्र हो गया था। जगन्नाथ मिश्र ने जब सुना, तब वह दौड़े हुए आए और निमाई को पकड़कर पीटना चाहा पर ब्राह्मण ने उन्हें रोक दिया।

शची देवी के बहुत कहने-सुनने पर ब्राह्मण ने फिर भोजन बनाया। उस समय निमाई को अलग ले जाकर रस्सी से बाँध दिया गया था। ब्राह्मण देवता आँखे बंद कर फिर भगवान् को भोग लगाने लगे। लेकिन ठीक उसी समय निमाई न जाने कैसे बन्धन से छूटकर वहां आ गए और आकर खाने में हाथ डाल दिया। कोई नहीं जान पाया कि उन्होंने रस्सी के बन्धन कैसे खोल लिए थे। ब्राह्मण का भोजन फिर अपवित्र हो गया। उसने समझ लिया कि आज उसके भाग्य में भोजन नहीं लिखा है, इसीलिए उस ने भूखा ही रहने की ठान ली। किन्तु शची देवी और मिश्र जी के आग्रह पर ब्राह्मण ने फिर खाना तैयार किया। उधर निमाई रस्सी से छूट कर

भागने न पाए, उनका बड़ा भाई वहीं पास बैठ गया। डर था कि कहीं नटखट निमाई फिर वही गुल न खिला दे।

अब की बार जब ब्राह्मण ने भगवान् को भोग लगाने के लिए आँखे बंद की, तब उसने अपने ध्यान में एक विचित्र दृश्य देखा। उसे ऐसा जान पड़ा जैसे साक्षात् भगवान् विष्णु उसके सामने प्रकट हो गये हैं और कह रहे हैं- तुम्हारे बुलाने पर मैं बालक के रूप में दो बार तो तुम्हारे पास आ चुका हूँ। पर तुमने पहचाना ही नहीं, अब कहो क्या चाहते हो ?

अब ब्राह्मण की समझ में बात आई। बालक निमाई के रूप में स्वयं भगवान् ने उसके भोजन का भोग लगाया था। ब्राह्मण ने भगवान् से क्षमा माँगी। भगवान् उसे मनचाहा वर देकर अन्तर्धान हो गए।

निमाई पढ़ने में भी बहुत होशियार थे। छोटी-सी आयु में वह संस्कृत के अच्छे-खासे विद्वान हो गए। अभी वह ग्यारह वर्ष के ही हुए थे कि उनके पिता का देहान्त हो गया। इससे पहले उनके बड़े भाई, विश्वरूप विवाह के डर से घर से भाग चुके थे। ऐसा पता चला था कि उन्होंने कहीं सन्यास ले लिया है। लेकिन लाख ढूँढ़ने पर भी उनका पता नहीं चला।

अपने विद्यार्थी जीवन में निमाई ने न्याय शास्त्र के ऊपर एक बहुत सुन्दर ग्रंथ लिखा था। उनके सहपाठी, रघुनाथ शिरोमणि को जब इस बात का पता चला कि निमाई ने कोई पुस्तक लिखी है, तब वह पण्डित निमाई के पास आए। निमाई ने अपने मित्र के कहने पर अपनी पुस्तक पढ़कर उन्हें सुना दी। सुनकर रघुनाथ की आँखों में आँसू आ गए। निमाईको बड़ा ताज्जुब हुआ। उन्होंने जब इसका कारण पूछा, तब रघुनाथ ने कहा- निमाई! मैंने भी न्याय शास्त्र पर एक ग्रन्थ लिखा है, परन्तु तुम्हारे ग्रन्थ के होते हुए उसे कोई नहीं पूछेगा। तुम्हारा ग्रन्थ बहुत ही अच्छा है।

निमाई पण्डित का दिल बड़ा कोमल था। वह सबको बिल्कुल अपना समझते थे। इसीलिए वह रघुनाथ को दुःखी देखकर व्याकुल हो उठे। वह बोले-“मित्र! बस इतनी-सी बात के लिए परेशान हो ?”

यह कह कर उन्होंने उसी समय रघुनाथ के सामने अपनी पुस्तक गंगा में फेंक दी। निमाई को वह ग्रन्थ तो सदा के लिए गंगा में समा गया पर रघुनाथ शिरोमणि का न्याय-शास्त्र पर लिखा ‘दीधिति’ नामक ग्रन्थ, जो आज भी मिलता है, बहुत प्रसिद्ध है।

एक बार निमाई पंडित अपने पिता का श्राद्ध करने के लिए गया गए। वह गया क्या गए, सारा नगर सूना हो गया। उनके चले जाने से सभी लोग उदास नज़र आने लगे।

आखिर श्राद्ध करने के बाद एक दिन निमाई पंडित लौटे। लौट तो आए लेकिन अब वे पहले के निमाई पंडित नहीं रहे। उनमें एक अजीब परिवर्तन हो गया था। वे गया में चलाई गई पाठशाला में पढ़ाते-पढ़ाते किसी भाव में खो जाते थे। पढ़ाते की बात भूलकर नाचने लग जाते। हरे कृष्ण! हरे कृष्ण! का कीर्तन करते हुए गाते और नाचते हुए बेसुध होकर गिर पड़ते। उन्हें खाने पीने की सुधि भी न रहती।

उनकी भक्ति और मस्ती की कोई थाह नहीं रह गयी थी। इसी मस्ती में एक बार वह झील में और दूसरी बार समुद्र में कूद पड़े थे। सौभाग्य से दोनों बार जीवित बाहर निकाल लिए

गए। चौबिसों घंटे उन पर कृष्ण की भक्ति का नशा चढ़ा रहता। अपने तन-बदन का उन्हें होश नहीं रहता था।

चैतन्य की मृत्यु जगन्नाथ पुरी में रथयात्रा के अवसर पर हुई। उस समय उनकी आयु 48 वर्ष की थी। उनके अद्भुत जीवन का प्रभाव सारे बंगाल पर पड़ा। यही नहीं, भारत के अन्य भागों में भी कृष्ण-भक्ति की एक बड़ी लहर उमड़ पड़ी, और उसने सारे देश की जनता में भेद-भाव से रहित, निर्मल प्रेम की एक ऐसी धारा बहा दी, जो आज तक सूख न सकी।

भारत वर्ष की एकता को मजबूत बनाने में धर्म और संस्कृति का बड़ा भारी हाथ रहा है। लेकिन जब कभी हमारे देश के अलग-अलग हिस्सों को एक दूसरे से जोड़ने वाली कड़ी कमजोर पड़ने लगती थी, तब एक न एक ऐसी विभूति अवश्य पैदा होती रही, जो जनता को धर्म की एकता का सन्देश दे और सही रास्ता सुझाए। ऐसी ही विभूति थे चैतन्य महाप्रभु।

* अभ्यास *

1. चैतन्य महाप्रभु की जीवनी संक्षेप में लिखो।
2. चैतन्य महाप्रभु का जन्म कब और कहाँ हुआ ?
3. रघुनाथ शिरोमणि के ग्रन्थ का क्या नाम है ?
4. चैतन्य महाप्रभु के जीवन का भारत पर क्या प्रभाव पड़ा ?

